नईदुनिया

संपादकीय

गरीबों के बच्चों की शिक्षा पर ताला

पंजाब सरकार का 15 साल का गुनाह

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 का उद्देश्य स्पष्ट था कि आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के बच्चे भी उन निजी विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर सकें, जहां समाज के संपन्न वर्ग के बच्चे पढ़ते हैं। इसके लिए निजी गैर-सहायता प्राप्त विद्यालयों में 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित करने का प्रावधान किया गया। परन्तु पंजाब में पिछले 15 वर्षों से इस कानून का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं होना गंभीर चिंता का विषय है। सुप्रीम कोर्ट की फटकार के बाद यह तथ्य सामने आया कि राज्य में हजारों पात्र बच्चों को उनका संवैधानिक अधिकार नहीं मिल पाया।

संविधान का अनुच्छेद 21-ए प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का अधिकार देता है। ऐसे में यदि कोई राज्य सरकार वर्षों तक इस कानून को लागू करने में विफल रहती है तो यह केवल प्रशासनिक कमी नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की भावना पर भी आघात है। याचिका में बताया गया कि जहां 50 हजार से अधिक बच्चे इस योजना के पात्र थे, वहां केवल लगभग 450 विद्यार्थियों को ही प्रवेश मिल सका। यह आंकड़ा व्यवस्था की विफलता को उजागर करता है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम की धारा 12(1)(सी) स्पष्ट रूप से कहती है कि प्रत्येक निजी विद्यालय को कक्षा एक में 25 प्रतिशत सीटें कमजोर एवं वंचित वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित करनी होंगी और उनकी फीस सरकार वहन करेगी। इसके बावजूद इस प्रावधान को लागू कराने के लिए न्यायालय की शरण लेना पड़ना दुर्भाग्यपूर्ण है। यह सवाल भी उठता है कि यदि कानून बनने के बाद भी उसका पालन न हो तो आम नागरिक किस पर भरोसा करे।

राज्य सरकार न समय पर पारदर्शी पोर्टल विकसित कर सकी, न प्रवेश प्रक्रिया को व्यवस्थित बना सकी और न ही स्कूलों की समुचित मैपिंग कर सकी। दूसरी ओर कई निजी विद्यालयों ने भी नियमों की अनदेखी करते हुए पात्र बच्चों को प्रवेश देने में रुचि नहीं दिखाई। इससे गरीब परिवारों के बच्चों के सामने गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के अवसर सीमित हो गए।

शिक्षा केवल विद्यालय तक पहुंचने का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन की सबसे मजबूत सीढ़ी है। यदि किसी बच्चे को बेहतर शिक्षा से वंचित किया जाता है तो उसके भविष्य के साथ-साथ समाज की प्रगति भी प्रभावित होती है। यही कारण है कि शिक्षा के अधिकार को संविधान में मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया है।

सुप्रीम कोर्ट ने अब प्रत्येक जिले में सर्वेक्षण कर पात्र बच्चों और विद्यालयों का विवरण तैयार करने का निर्देश दिया है। यह कार्य वर्षों पहले हो जाना चाहिए था। अब राज्य सरकार को पारदर्शी ऑनलाइन व्यवस्था विकसित करनी होगी, लंबित प्रवेशों का शीघ्र निपटारा करना होगा, फीस प्रतिपूर्ति के लिए पर्याप्त बजट सुनिश्चित करना होगा और नियमों का उल्लंघन करने वाले विद्यालयों के विरुद्ध प्रभावी कार्रवाई करनी होगी।

शिक्षा अधिकार है, दया या अनुकंपा नहीं। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की सफलता इस बात से आंकी जाती है कि वह समाज के सबसे कमजोर वर्ग को कितना अवसर देती है। यदि गरीब बच्चों के लिए शिक्षा के द्वार बंद रहेंगे तो समान अवसर और सामाजिक न्याय का सपना अधूरा ही रहेगा। अब समय आ गया है कि कानून की भावना को पूरी ईमानदारी से लागू कर प्रत्येक बच्चे को उसका अधिकार सुनिश्चित किया जाए।

आजकल

बारूद के ढेर पर बसा शहर

आबादी के बीच पटाखा बाजार प्रशासनिक लापरवाही का ज्वलंत प्रमाण

भोपाल के हलालपुरा स्थित पटाखा सेंटर में लगी आग ने फिर सवाल खड़ा कर दिया है कि शहरों के बीच बारूद का कारोबार आखिर कब तक चलता रहेगा। यह समस्या केवल भोपाल तक सीमित नहीं, बल्कि इंदौर, जबलपुर, ग्वालियर समेत मध्यप्रदेश के अधिकांश बड़े शहर इसी खतरे के साये में जी रहे हैं। आबादी वाले क्षेत्रों में संचालित पटाखा बाजार प्रशासनिक लापरवाही का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

हलालपुरा की घटना ने स्पष्ट कर दिया कि यदि आबादी और विस्फोटक सामग्री के कारोबार के बीच सुरक्षित दूरी नहीं बनाई गई, तो हरदा जैसी त्रासदी किसी भी शहर में दोहराई जा सकती है। दुर्भाग्य यह है कि शासन-प्रशासन अब भी इस गंभीर मुद्दे पर ठोस कदम उठाने में असफल रहा है।

भोपाल में पटाखा बाजार को शहर से बाहर स्थानांतरित करने की प्रक्रिया इसका उदाहरण है। एक वर्ष पूर्व व्यापारियों को निर्देश दिए गए, लेकिन आज तक वैकल्पिक भूमि चिह्नित नहीं हो सकी। नतीजतन व्यापारी न्यायालयों से राहत प्राप्त कर रहे हैं और स्थिति यथावत बनी हुई है। चौक बाजार और संत नगर जैसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में अब भी पटाखा गोदाम संचालित हैं।

विस्फोटक अधिनियम, 1884 तथा पटाखा नियम, 2008 के अनुसार रिहायशी क्षेत्रों, स्कूलों, अस्पतालों और पेट्रोल पंपों से सुरक्षित दूरी अनिवार्य है, लेकिन व्यवहार में इन नियमों का पालन नहीं हो रहा। अग्निशमन विभाग की एनओसी भी कई बार केवल कागजी औपचारिकता बनकर रह जाती है।

समाधान स्पष्ट है-आबादी के बीच संचालित पटाखा गोदामों का सुरक्षा ऑडिट कर उन्हें तत्काल हटाया जाए, शहर से बाहर सुरक्षित एक्सप्लोसिव जोन विकसित किए जाएं, लाइसेंस प्रक्रिया पारदर्शी बने और जिम्मेदार अधिकारियों की जवाबदेही तय हो। पटाखा बाजार रोजगार देता है, पर जान की कीमत पर नहीं। जनता की सुरक्षा से बड़ा कोई त्योहार नहीं हो सकता।

हवा में जहर, सांसों पर संकट

बढ़ते प्रदूषण के दुष्परिणाम और बचाव की राह

मध्यप्रदेश को भारत का हृदय कहा जाता है, परन्तु आज यह हृदय प्रदूषण की बीमारी से जूझ रहा है। बात सिर्फ सिंगरौली की नहीं है, जहां गर्भ में पलते 175 शिशुओं की एक वर्ष में मौत हो गई। ग्वालियर, भोपाल, इंदौर, जबलपुर, कटनी और सतना सहित प्रदेश के हर बड़े शहर की हवा जहरीली होती जा रही है। देशभर में हालात और भी भयावह हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की 2025 की रिपोर्ट बताती है कि दुनिया के 20 सबसे प्रदूषित शहरों में 14 भारत के हैं। प्रदूषण अब केवल पर्यावरण का मुद्दा नहीं, बल्कि जनस्वास्थ्य का आपातकाल बन चुका है।

प्रदूषण के खिलाफ जंग किसी विश्व युद्ध से कम नहीं, क्योंकि इसमें दुश्मन अदृश्य है और हर घर तक पहुंच चुका है। इससे जीतने के लिए बुलेट नहीं, बुलंद इरादों की जरूरत है। यदि आज नहीं चेते तो इतिहास पूछेगा कि जब बच्चों की कोख में सांसें टूट रही थीं, तब हम क्या कर रहे थे।

मध्यप्रदेश में प्रदूषण की समस्या बहुआयामी है। एक ओर सिंगरौली-सोन क्षेत्र थर्मल पावर प्लांट, कोयला खदानों और सीमेंट उद्योगों के कारण गैस चैंबर बन चुका है, तो दूसरी ओर भोपाल और इंदौर जैसे महानगर वाहनों, निर्माण गतिविधियों और बायोमास जलाने से जूझ रहे हैं। सीपीसीबी के 2026 के आंकड़ों के अनुसार ग्वालियर में पीएम 2.5 का वार्षिक औसत 98 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर है, जबकि सुरक्षित सीमा 40 है। भोपाल में नवंबर से जनवरी के बीच वायु गुणवत्ता सूचकांक 300 के पार पहुंच जाता है। दिल्ली-एनसीआर हर सर्दी में स्मॉग की चादर ओढ़ लेता है, पंजाब-हरियाणा में पराली, बिहार-उत्तर प्रदेश में ईंट भट्ठे, महाराष्ट्र-गुजरात में रासायनिक उद्योग और झारखंड-छत्तीसगढ़ में खनन प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। लैंसेट की रिपोर्ट के अनुसार 2025 में भारत में 16.7 लाख मौतें केवल वायु प्रदूषण के कारण हुईं। यह कोरोना से भी बड़ी महामारी है, परन्तु इस पर उतना शोर नहीं है।

प्रदूषण का असर जन्म से पहले ही शुरू हो जाता है। सिंगरौली में गर्भस्थ शिशुओं की मौतें इसका प्रमाण हैं। पीएम 2.5 के सूक्ष्म कण रक्त के माध्यम से भ्रूण तक पहुंचते हैं, जिससे जन्म के समय कम वजन, ऑटिज्म, अस्थमा और तंत्रिका तंत्र संबंधी बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। बच्चों में निमोनिया तथा वयस्कों में सीओपीडी, हृदयाघात, स्ट्रोक और फेफड़ों का कैंसर तेजी से बढ़ रहे हैं। एम्स के अध्ययन के अनुसार दिल्ली के 30 प्रतिशत स्कूली बच्चों के फेफड़े कमजोर हैं। विश्व बैंक का अनुमान है कि प्रदूषण के कारण भारत की जीडीपी को प्रतिवर्ष 8.5 लाख करोड़ रुपये का नुकसान होता है। यह स्वास्थ्य व्यय, श्रम उत्पादकता में कमी और फसल नुकसान का परिणाम है। ओजोन प्रदूषण से गेहूं और धान की पैदावार भी 10 से 15 प्रतिशत तक घट रही है। प्रदूषण का असर पारिस्थितिकी तंत्र पर भी स्पष्ट दिखाई देता है। यमुना और नर्मदा जैसी नदियों में औद्योगिक कचरा जलीय जीवन को समाप्त कर रहा है। मिट्टी में भारी धातुओं की मौजूदगी से सब्जियां विषैली होती जा रही हैं। तापमान वृद्धि और बेमौसम बारिश का चक्र भी प्रदूषण से जुड़ा है। परागण करने वाली मधुमक्खियों की संख्या घट रही है, जिससे खाद्य सुरक्षा पर संकट गहराता जा रहा है। प्रदूषण का सबसे बड़ा शिकार गरीब वर्ग बनता है। झुग्गियों में रहने वाले लोग, सड़क पर काम करने वाले मजदूर और ट्रैफिक पुलिसकर्मी एयर प्यूरीफायर नहीं खरीद सकते। अमीर घर बंद करके बच जाता है, लेकिन गरीब की सांसें उखड़ती रहती हैं।

प्रदूषण के बढ़ने के पीछे विकास और पर्यावरण के बीच गलत संतुलन भी जिम्मेदार है। उद्योग स्थापित करते समय पर्यावरणीय नियमों को अक्सर कागजी औपचारिकता बना दिया जाता है। निगरानी तंत्र कमजोर है। देश में केवल 1300 सरकारी मॉनिटरिंग स्टेशन हैं, जबकि आवश्यकता 4000 की है। सार्वजनिक परिवहन की बदहाली भी एक बड़ा कारण है। भोपाल और इंदौर में मेट्रो परियोजनाएं अभी अधूरी हैं, जिससे लोग निजी वाहनों पर निर्भर हैं। कचरा प्रबंधन की स्थिति भी चिंताजनक है। देश में उत्पन्न 62 मिलियन टन कचरे में से केवल 20 प्रतिशत का ही वैज्ञानिक निपटान होता है, शेष जलकर हवा को जहरीला बनाता है।

प्रदूषण से लड़ाई केवल सरकार की नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक जिम्मेदारी है। राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम के लक्ष्यों को प्रभावी बनाने के लिए पर्याप्त बजट और जवाबदेही तय करनी होगी। प्रदूषण मानकों का उल्लंघन करने वाले उद्योगों पर कठोर कार्रवाई हो तथा सभी थर्मल पावर प्लांट में एफजीडी सिस्टम अनिवार्य किया जाए। हर शहर में इलेक्ट्रिक बसें, मेट्रो और साइकिल ट्रैक विकसित किए जाएं तथा निजी वाहनों पर कंजेशन टैक्स लगाया जाए। कृषि अपशिष्ट प्रबंधन के तहत पराली जलाने पर केवल जुर्माना लगाने के बजाय हैप्पी सीडर मशीन पर 90 प्रतिशत सब्सिडी और बायो-सीएनजी उत्पादन को बढ़ावा दिया जाए। सिंगरौली जैसे क्षेत्रों के लिए जस्ट ट्रांजिशन नीति बनाकर कोयले से सौर ऊर्जा की ओर बदलाव में स्थानीय रोजगार सुनिश्चित किया जाए।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रत्येक जिले में प्रदूषण जनित बीमारियों के लिए अलग ओपीडी स्थापित हो। आशा कार्यकर्ताओं को पल्स ऑक्सीमीटर और एन-95 मास्क उपलब्ध कराए जाएं तथा गर्भवती महिलाओं के रक्त में लेड और मर्करी की मुफ्त जांच हो। उद्योगों के सीएसआर का बड़ा हिस्सा प्रदूषण नियंत्रण तकनीक पर खर्च किया जाए और 'जीरो लिक्विड डिस्चार्ज' प्रणाली को अनिवार्य बनाया जाए। प्रत्येक घर में एक पेड़ लगाने का संकल्प लिया जाए, त्योहारों पर पटाखों के स्थान पर पौधे वितरित किए जाएं, छोटे सफर के लिए साइकिल या पैदल चलने को बढ़ावा मिले तथा कचरे को अलग-अलग कर खुले में जलाने से बचा जाए। वायु गुणवत्ता सूचकांक देखकर अत्यधिक प्रदूषित दिनों में सुबह-शाम व्यायाम से भी परहेज करना चाहिए।

सिंगरौली की कोख में मरे 175 बच्चे हमें झकझोरते हैं, लेकिन यह केवल सिंगरौली की कहानी नहीं है। यह पटना के अस्थमा पीड़ित बच्चे, नागपुर के कैंसर मरीज और दिल्ली के उस बुजुर्ग की भी कहानी है जो ऑक्सीजन सिलेंडर के सहारे जीवन जी रहा है। यदि विकास की कीमत नागरिकों की सांसें हैं तो ऐसा विकास किसी काम का नहीं। संविधान का अनुच्छेद 21 जीवन का अधिकार देता है और स्वच्छ हवा उसी अधिकार का अभिन्न हिस्सा है। सरकारों को समझना होगा कि जीडीपी के आंकड़े तब तक बेमानी हैं, जब तक एक्यूआई के आंकड़े बेहतर नहीं होते। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**

जंगल से मंडी तक : मध्यप्रदेश में वनौषधियों की नई क्रांति

वनवासियों की आय बढ़ाने का सरकारी संकल्प

मध्यप्रदेश की पहचान कभी टाइगर स्टेट तो कभी हृदय प्रदेश के रूप में रही है। अब यह राज्य वनौषधि प्रदेश बनने की राह पर है। राज्य सरकार ने एक ऐतिहासिक अधिसूचना जारी कर 25 नई वनौषधियों को कृषि उपज मंडियों में व्यापार के लिए अधिसूचित किया है। इसके साथ ही मंडियों में बिकने वाली वनौषधियों की संख्या 66 से बढ़कर 91 हो गई है। यह कदम केवल एक प्रशासनिक निर्णय नहीं, बल्कि जंगलों में रहने वाले लाखों आदिवासियों और वनवासियों के जीवन में आर्थिक क्रांति की शुरुआत है।

हरियाली से खुशहाली की ओर बढ़ता यह कदम 'वोकल फॉर लोकल' और 'आत्मनिर्भर भारत' का सबसे हरा उदाहरण है। यह पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और आदिवासी कल्याण तीनों को जोड़ता है। पेड़ कटे बिना कमाई और जंगल बचे तो जीवन बचे। सरकार ने दरवाजा खोल दिया है, अब आवश्यकता है कि वन विभाग, मंडी बोर्ड, आयुष विभाग और जनजातीय कल्याण विभाग मिलकर कार्य करें। ग्राम सभाओं को मजबूत किया जाए और एमएसपी की तर्ज पर वनौषधियों का न्यूनतम मूल्य तय हो।

मध्यप्रदेश के जंगलों में सदियों से सेहत का खजाना छिपा था, अब सरकारी पहल से उसके लिए बाजार का रास्ता खुला है। यदि यह पहल सफल रही तो जंगल रोने की नहीं, रोजगार की जगह बनेंगे और तब सही मायने में कहा जाएगा-'एमपी अजब है, सबसे गजब है।'

मंडी बोर्ड के अनुसार सरकार का लक्ष्य कृषकों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य दिलाना है। इसी दिशा में 25 नई वनौषधियों को मंडियों में नीलामी के लिए अधिसूचित किया गया है। इनमें चिया बीज, अकरकरा, हिंगोट, जामुन, कंठकारी, भृंगराज, टेसू फूल, बबूल फली, एलोवेरा पत्ती, गोखरू, नागरमोथा, निर्गुणी, अमरबेल, सहजन पत्ती, बिच्छूफल, नीलगिरी, इंद्रायण फल, हरसिंगार पत्ती, सनाय पत्ती और सनाय बीज शामिल हैं।

अब तक वन क्षेत्रों में रहने वाले लोग इन औषधियों को एकत्र कर बिचौलियों को औने-पौने दाम पर बेच देते थे। न सही तौल होती थी और न पारदर्शी मूल्य। मंडियों में नीलामी की व्यवस्था होने से अब उन्हें प्रतिस्पर्धी मूल्य, सही तौल और पारदर्शी व्यापार का लाभ मिलेगा। यदि विक्रेता मूल्य से संतुष्ट नहीं होगा तो वह सौदा निरस्त भी कर सकेगा।

मध्यप्रदेश देश के लगभग 25 प्रतिशत वन क्षेत्र का धनी है। बस्तर से लेकर बैतूल और मंडला से लेकर श्योपुर तक फैले जंगलों में 500 से अधिक औषधीय पौधे पाए जाते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दुनिया की 80 प्रतिशत आबादी प्राथमिक स्वास्थ्य के लिए पारंपरिक औषधियों पर निर्भर है। वैश्विक हर्बल बाजार 2030 तक 10 लाख करोड़ रुपये का हो जाएगा, पर इस प्राकृतिक संपदा पर बैठे मध्यप्रदेश के वनवासी अब तक गरीबी से जूझते रहे।

कारण स्पष्ट था। बाजार नहीं था, वनौषधियों को कृषि उपज का दर्जा नहीं मिला था और इनके व्यापार में लाइसेंस, परमिट तथा बिचौलियों का जाल था। मंडियों में स्थान नहीं होने से संग्राहकों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता था। नीमच मंडी में हाल ही में चिरायता बीज 6.50 लाख रुपये प्रति क्विंटल बिका, जबकि जंगल से उसे एकत्र करने वाले को 10 हजार रुपये भी मुश्किल से मिलते थे। नई अधिसूचना इसी खाई को पाटने का प्रयास है।

सरकारी पहल के तीन बड़े लाभ दिखाई देते हैं। पहला, आय बढ़ेगी। कृषि विपणन बोर्ड के अनुसार प्रदेश की मंडियों में आने वाली वनौषधियों से प्रतिवर्ष 20 करोड़ रुपये से अधिक का राजस्व प्राप्त होता है। नई 25 औषधियों के जुड़ने से यह आंकड़ा 50 करोड़ रुपये पार कर सकता है। दूसरा, पलायन रुकेगा। जब जंगल से ही सम्मानजनक आमदनी होगी तो युवा शहरों की ओर नहीं भागेंगे। तीसरा, संरक्षण को बढ़ावा मिलेगा। जब औषधीय पौधे कमाई का जरिया बनेंगे तो वनवासी स्वयं जंगलों की रक्षा करेंगे।

राज्य सरकार ने वन धन विकास केंद्र और ट्राइफेड के साथ मिलकर 275 से अधिक केंद्र स्थापित किए हैं, जहां संग्रहण, ग्रेडिंग, पैकेजिंग और मूल्य संवर्धन का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। शहडोल की बैगा महिलाएं अब महुआ से लड्डू और आंवला से कैंडी बनाकर ऑनलाइन बेच रही हैं। यह बदलाव मंडी अधिसूचना से और तेज होगा।

मंडियों में अधिसूचित होने का अर्थ है कानूनी मान्यता। अब फार्मा कंपनियां, आयुर्वेदिक दवा निर्माता और निर्यातक सीधे मंडी से नीलामी के माध्यम से खरीद सकेंगे। गुणवत्ता प्रमाणित होने पर विदेशी बाजार भी खुलेंगे। डिंडौरी का शहद, पातालकोट की हर्बल चाय और अमरकंटक की जड़ी-बूटियों को एमपी ब्रांड की पहचान मिलेगी। आयुष मंत्रालय ने 2023 में 'वन नेशन, वन हर्बल स्टैंडर्ड' की शुरुआत की है। मंडियों में आने वाली हर वनौषधि की जांच होगी, जिससे मिलावट रुकेगी और अंतरराष्ट्रीय मानकों का पालन सुनिश्चित होगा। ई-नाम पोर्टल से जुड़ने पर देशभर का खरीदार एक क्लिक पर बोली लगा सकेगा और किसान को सर्वोच्च मूल्य प्राप्त होगा।

हालांकि चुनौतियां भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी चुनौती जागरूकता की है। वनवासियों को यह जानकारी देनी होगी कि अब उनकी जड़ी-बूटियां मंडी में बिक सकती हैं। ग्राम पंचायत स्तर पर शिविर आयोजित किए जाएं। गुणवत्ता नियंत्रण के लिए तुड़ाई का सही समय, वैज्ञानिक तरीके से सुखाने और भंडारण का प्रशिक्षण आवश्यक है। कृषि विश्वविद्यालयों को वनौषधि संबंधी पाठ्यक्रम शुरू करने चाहिए। संग्रहण से मंडी तक पहुंचने में लगने वाले समय के दौरान छोटे संग्राहकों को वित्तीय सहायता मिले, इसके लिए शून्य ब्याज पर अग्रिम भुगतान की व्यवस्था हो। साथ ही मूल्य संवर्धन के लिए प्रत्येक ब्लॉक में मिनी हर्बल प्रोसेसिंग यूनिट स्थापित की जाए।

मध्यप्रदेश सरकार का लक्ष्य वर्ष 2028 तक वनौषधि व्यापार को 1000 करोड़ रुपये तक पहुंचाना है। यह असंभव नहीं है। छत्तीसगढ़ अपने हर्बल ब्रांड के माध्यम से 300 करोड़ रुपये का कारोबार कर चुका है, जबकि मध्यप्रदेश के पास उससे कहीं अधिक वन संपदा है। जब बैतूल का गोंड युवा चिया बीज बेचकर ड्रोन खरीदेगा, मंडला की भारिया महिला एलोवेरा का जूस बनाकर दुबई भेजेगी और श्योपुर का सहरिया कंठकारी का काढ़ा ऑनलाइन बेचेगा, तब यह केवल आय नहीं, बल्कि आत्मसम्मान की नई कहानी होगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आंतरिक संकटों से घिरा पड़ोसी, लेकिन बदलती तकनीकी ताकत भारत के लिए नई चुनौती

पाकिस्तान एक बार फिर राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक बदहाली और आंतरिक अशांति के दौर से गुजर रहा है। बलूचिस्तान में विद्रोह, पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में असंतोष, अफगानिस्तान सीमा पर बढ़ता तनाव और लगातार गिरती अर्थव्यवस्था उसकी कमजोरियों को उजागर करते हैं। पहली नजर में यह तस्वीर किसी असफल होते राष्ट्र की प्रतीत होती है, लेकिन रणनीतिक दृष्टि से यही सबसे बड़ा भ्रम साबित हो सकता है। भारत के लिए पाकिस्तान को केवल उसकी आंतरिक समस्याओं के आधार पर आंकना भविष्य में गंभीर भूल हो सकती है।

इतिहास बताता है कि पाकिस्तान ने अपनी भौगोलिक स्थिति को हमेशा अपनी सबसे बड़ी ताकत बनाया है। दक्षिण एशिया, मध्य एशिया और पश्चिम एशिया के संगम पर स्थित होने के कारण वह शीत युद्ध से लेकर अफगान युद्ध और आतंकवाद के खिलाफ अमेरिकी अभियान तक वैश्विक शक्तियों के लिए उपयोगी बना रहा। आज जब पश्चिम एशिया और अफगानिस्तान फिर अस्थिरता के दौर में हैं और महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा तेज हो रही है, पाकिस्तान एक बार फिर अपनी रणनीतिक उपयोगिता स्थापित करने की कोशिश में है।

भारत के लिए सबसे बड़ी चिंता पाकिस्तान की घरेलू राजनीति नहीं, बल्कि उसकी तेजी से बढ़ती तकनीकी और सैन्य क्षमताएं होनी चाहिए। चीन के सहयोग से पाकिस्तान द्वारा कम समय में कई निगरानी उपग्रह अंतरिक्ष में भेजना केवल वैज्ञानिक उपलब्धि नहीं, बल्कि भविष्य के युद्ध की तैयारी का संकेत है। आधुनिक युद्ध अब केवल सीमा पर सैनिकों की संख्या से नहीं, बल्कि अंतरिक्ष से मिलने वाली सूचनाओं, साइबर नेटवर्क और कृत्रिम बुद्धिमत्ता से तय होगा। ऐसे में पाकिस्तान की क्षमताओं में हो रहा यह विस्तार भारत के लिए गंभीर रणनीतिक चुनौती है।

साइबर युद्ध का खतरा भी लगातार बढ़ रहा है। बीते वर्षों में साइबर हमले केवल वेबसाइटों तक सीमित थे, लेकिन अब बिजली, बैंकिंग, संचार और रक्षा ढांचे को निशाना बनाने की क्षमता विकसित हो रही है। चीन की तकनीकी सहायता से पाकिस्तान कम लागत में भारत के महत्वपूर्ण ढांचे को प्रभावित करने की क्षमता हासिल कर सकता है। भविष्य के संघर्ष में युद्ध की शुरुआत सीमा पर गोली चलने से पहले कंप्यूटर नेटवर्क पर हमलों से हो सकती है।

भारत को यह भी नहीं भूलना चाहिए कि पाकिस्तान

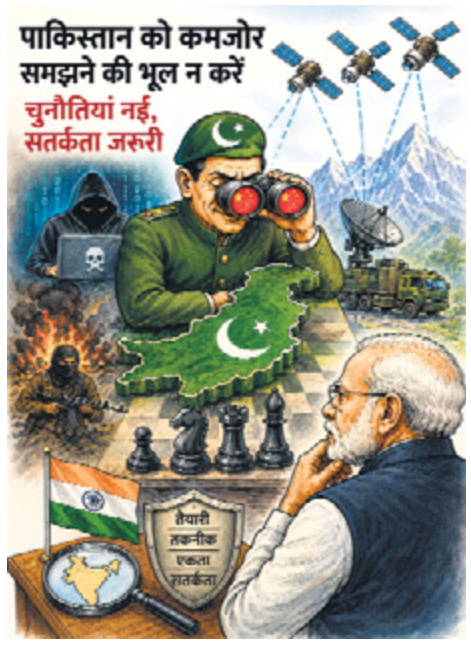

दशकों से आतंकवाद, घुसपैठ, मादक पदार्थों की तस्करी, कट्टरपंथ और फर्जी वित्तीय नेटवर्क जैसे हथियारों का इस्तेमाल करता आया है। यदि इन पारंपरिक तरीकों का मेल साइबर युद्ध, अंतरिक्ष निगरानी और सूचना युद्ध जैसी नई तकनीकों से हो गया, तो सुरक्षा चुनौतियां कहीं अधिक जटिल हो जाएंगी। युद्ध अब केवल जमीन पर नहीं, बल्कि डेटा, उपग्रह और डिजिटल नेटवर्क के माध्यम से भी लड़ा जाएगा।

पाकिस्तान की एक और विशेषता उसकी कूटनीतिक संतुलन साधने की क्षमता रही है। वह एक ओर चीन के साथ गहरे रणनीतिक संबंध बनाए हुए है तो दूसरी ओर अमेरिका और पश्चिमी देशों के साथ संवाद के रास्ते भी खुले रखता है। बदलती वैश्विक परिस्थितियों में यह संतुलन उसे बार-बार अंतरराष्ट्रीय समर्थन दिलाने में सफल रहा है। यही कारण है कि आंतरिक संकटों के बावजूद उसकी रणनीतिक प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई है।

भारत के सामने चुनौती केवल पाकिस्तान नहीं, बल्कि उसके पीछे तैयार हो रहा तकनीकी और सामरिक सहयोग का पूरा तंत्र है। इसका जवाब भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं, बल्कि दीर्घकालिक रणनीति में निहित है। रक्षा, अंतरिक्ष, साइबर सुरक्षा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और खुफिया तंत्र के बीच बेहतर समन्वय समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। साथ ही आर्थिक मजबूती, तकनीकी आत्मनिर्भरता और प्रभावी कूटनीति ही भारत की वास्तविक शक्ति बन सकती है।

किसी भी राष्ट्र की आंतरिक कमजोरी उसकी रणनीतिक क्षमता को स्वत: समाप्त नहीं कर देती। पाकिस्तान इसका जीवंत उदाहरण है। इसलिए भारत को दो अतियों से बचना होगा—एक, पाकिस्तान को उसकी समस्याओं के कारण पूरी तरह कमजोर मान लेना और दूसरी, उसकी हर गतिविधि को आवश्यकता से अधिक महत्व देना। विवेकपूर्ण सतर्कता और दीर्घकालिक तैयारी ही भारत की सबसे बड़ी सुरक्षा होगी।

आज का युग केवल सीमाओं की रक्षा का नहीं, बल्कि तकनीक, सूचना और रणनीतिक दूरदृष्टि का है। यदि भारत ने समय रहते बदलती चुनौतियों को नहीं समझा, तो भविष्य का संघर्ष पारंपरिक युद्धक्षेत्र से कहीं आगे निकल चुका होगा। इसलिए पाकिस्तान को उसकी आंतरिक अव्यवस्था के चश्मे से नहीं, बल्कि उसकी बदलती सामरिक क्षमताओं के परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**